पंचायत स्तरीय जनप्रतिनिधियों की शैक्षिक योग्यता का अध्ययन

डॉ0 राजश्री सिंह
शिक्षाशास्त्र विभाग

शोध–सार

भारत में पंचायती शासन व्यवस्था लोकतंत्र का आदर्श प्रतिबिंब हैं, जिसमें जनता स्थानीय स्तर पर अपने जनप्रतिनिधियों को चुनाव करती है जो प्रतिनिधि के रूप में क्षेत्रीय विकास हेतु कार्य करते हैं जिसमें शिक्षा भी प्रमुख बिंदु है। शिक्षा में व्यवस्था में जनप्रतिनिधियों का अप्रत्यक्ष रूप से हस्तक्षेप होता है। शिक्षा नीतियों के नियमन से लेकर क्रियान्वयन तक का कार्यजनप्रतिनिधियों का ही होता है इस हेतु इस शीर्षक का चयन किया गया जिसकामूल उद्देश्य स्थानीय स्तर पर चुने गये जनप्रतिनिधियों का शैक्षिक स्तर ज्ञात करना है। प्रस्तुत अध्ययन में उत्तर प्रदेश के आजमगढ़ मण्डल के बलिया जनपद के पंचायत स्तरीय सभी जनप्रतिनिधियों का चयन उद्देश्यपूर्ण प्रतिदर्शन विधि द्वारा किया गया है। अध्ययन के परिणामस्वरूप यह पाया गया कि जनप्रतिनिधियों की शिक्षा का स्तर निम्न है।

मुख्य शब्द : *जनप्रतिनिधि, शैक्षिक स्तर।*

अध्ययन की पृष्ठभूमि :

भारत में पंचायती व्यवस्था का इतिहास बहुत प्राचीन है। वैदिक कालीन साहित्य में सभा व समितियों का वर्णन मिलता है, जो लोगों के हित में कार्य करती थीं। चाणक्य के अर्थशास्त्र में भी आदर्श गाँव का उल्लेख मिलता है, जो मध्ययुगीन शासन व्यवस्था का प्रमाण है। चन्द्रगुप्त मौर्य के शासन काल तक यह व्यवस्था यथावत चलती रही परन्तु मुगल शासकों के हस्तक्षेप के कारण स्थानीय शासन व्यवस्था के विनाश का आरम्भ हुआ औरब्रिटिश काल तक यह व्यवस्था पूर्णतः नष्ट हो गयी। स्वतंत्रता प्रप्ति के पश्चात जब संविधान सभा में उद्देश्य प्रस्ताव पारित हुआ उसमें पंचायत व्यवस्था का जिक्र नहीं था जो विवाद का कारण बन गया। काफी बहस के बाद अंततः यह स्वीकार किया गया कि पंचायत व्यवस्था का संविधान में समावेश किया जाना चाहिए। अतः 22 नवंबर 1948 को प्रस्ताव प्रस्तुत कर पंचायतों के गठन व उनके अधिकार सम्बन्धित प्रस्ताव पारित किया गया।

पंचायती राज व्यवस्था भारतीय लोकतंत्र का अद्भुत अभिलक्षण है, जो प्रत्येक नागरिक को शासन की गतिविधियों में सक्रिय सहभागिता सुनिश्चित करने के दृष्टिकोण पर आधृत है। पंचायती राज व्यवस्था महात्मा गांधी की 'ग्राम स्वराज' संकल्पना का प्रतिफल है, जिसकी आवश्यकता को स्वीकारते हुए संविधान निर्माताओं ने 40वें अनुच्छेद में स्थान दिया। किन्तु इन संस्थाओं को विधिक संस्तर 1993 के 73वें संविधान संशोधन द्वारा प्राप्त हुआ। इस संशोधन के द्वारा प्रत्येक राज्य में पंचायती राज की एक समान कार्यप्रणाली, निश्चित कार्य अवधि का चुनाव, कार्य एवं शक्तियाँ तथा राज्य वित्त आयोग के माध्यम से वित्तीय संसाधनों के हस्तान्तरण के प्रावधान किये गये।

73वें संविधान संशोधन तथा इसके उपरान्त राज्यों व संघ शासित क्षेत्रों ने (जहाँ अधिनियम लागू हो) अपने पूर्व विद्यमान पंचायती राज सम्बन्धी कानूनों में आवश्यक संशोधन कर लिए, किन्तु उनका प्रभावी निष्पादन वर्तमान समय की चुनौती है। आज यह जानना आवश्यक है कि इस पंचायती राज की व्यवस्था से संविधान संशोधन का उद्देश्य कहाँ तक पूर्ण हुआ है। निःसन्देह पंचायती राज संस्थाएं ग्रामीण विकास की महत्वपूर्ण धूरी है, परन्तु उनकी सफलता के लिए राजनीतिक इच्छाशक्ति एवं प्रशासनिक समर्थन पूर्वापेक्षा है (जोशी एव मंगलानी, 2010, पृ0सं0,71)। **पंचायती राज का गठन व कार्यक्षेत्र :**

योजना आयोग की 1955 की रिपोर्ट 'सामुदायिक विकास योजना' को नया रूप देने की आवश्यकता महसूस की गयी। इसके लिए 1957 में बलवंतराय मेहता की अध्यक्षता में एक समिति का गठन किया गया। इस समिति ने ग्राम पंचायत विकास कार्यक्रम तथा ग्रामीण समस्याओं का गहराई से अध्ययन कर जो व्यापक सुझाव दिये उसी पर मौजूदा पंचायती राज का ढाँचा खड़ा किया गया है। इस समिति द्वारा भी यही महसूस किया गया कि लोकतंत्र की सफलता के लिए आवश्यक है कि शक्ति जनता के हाथ में हो। अतः विकेन्द्रीकरण को विकास का केन्द्र बिन्दु बनाकर त्रिस्तरीय पंचायती राज की सिफारिश की गयी जो इस प्रकार है–

(क) ग्राम स्तर पर – ग्राम पंचायत
(ख) पंचायत स्तर पर – पंचायत समिति
(ग) जिला स्तर पर – जिला परिषद्

इस त्रिस्तरीय व्यवस्था को राष्ट्रीय स्तर पर स्वीकार किया गया और पंचायत को राज्यों का विषय माना गया। इसके फलस्वरूप 2 अक्टूबर, 1959 को सर्वप्रथम पंडित जवाहर लाल नेहरू ने राजस्थान के नागौर जिले में दीप जलाकर पंचायती व्यवस्था की स्थापना की (जोशी एव मंगलानी, 2010, पृ0सं0–32)। इस त्रिस्तरीय व्यवस्था को विभिन्न राज्यों में पृथक नामों से जाना जाता है। उत्तर प्रदेश के सन्दर्भ में पंचायती राज की स्थिति का आंकलन करना समीचीन है। पंचायती राज व्यवस्था के त्रिस्तरीय ढाँचे का स्वरूप इस प्रकार है– (1) ग्राम पंचायत (2) क्षेत्र पंचायत (3) जिला पंचायत।लोकतांत्रिक व्यवस्था की प्रमुख प्रक्रिया तथा विशेषता जनमत द्वारा अपने प्रतिनिधि का चयन है तथा इस प्रक्रिया के माध्यम से ही वह लोकतंत्र मे प्रतिभाग करने की क्षमता प्राप्त करता है। नेतृत्व इसी क्षमता के प्रतिफल के रूप में दृष्टिगोचर होता है। नेतृत्व का एक प्रमुख विशेषता यह है कि लोग नेतृत्वकर्ता को स्वयं से श्रेष्ठ मानते हैं अर्थात् जन मानस के लिए यह श्रेष्ठता का पर्याय है। परन्तु आवश्यक नहीं कि यह सदैव सत्य ही हो, कल्पित भी हो सकती है। नेतृत्व का अभिप्राय है, प्रतिनिधित्व करने की योग्यता, जो लोकतांत्रिक राजनीति में प्रायः देखी जा सकती है। लोकतांत्रिक राष्ट्रों में नेताओं (जन–प्रतिनिधि) तथा अनुयायियों (जनता) के मध्य पारस्परिक निकटता व सम्पर्क रहता है। जनता सुगमता से अपने प्रतिनिधि तक पहुँच सकती है तथा अपने विचार उन तक पहुँचा सकती है, और जन–प्रतिनिधि उनके विचारों को अपने कार्यक्रमों में समाविष्ट करने का प्रयत्न करते हैं (वर्मा, 1971, पृ0सं0, 720)।

हमारे निर्वाचित जन–प्रतिनिधि, नीति–नियंता की भूमिका में इन सरोकारों से किस सीमा तक परिचित हैं, यही उनकी सम्बन्धित क्षेत्र में अभियोग्यता–क्षमता की उत्कृष्टता का द्योतक होगी। समाज का प्रजातांत्रिक ढांचा एक गतिशील व्यवस्था है, जिसमें समयानुसार बदलाव की आवश्यकता होती है, चाहे वह इसका राजनैतिक पक्ष हो, आर्थिक पक्ष हो, सामाजिक–शैक्षिक अथवा समसामयिक पक्ष हो। जहाँ तक जन–प्रतिनिधियों के चुनाव का प्रश्न है, तो इनके निर्वाचन हेतु कुछ पात्रता शर्तें हैं, जो कि संविधान में स्पष्टता के साथ वर्णित हैं। यह विचारणीय है कि इन शर्तों में संविधान अंगीकरण से लेकर आज तक किसी भी प्रकार की शैक्षिक योग्यता की अनिवार्यता महसूस नहीं की गयी, जिससे जन–प्रतिनिधियों की अभियोग्यता व क्षमताओं में वांछित अभिवृद्धि हो, और उनके द्वारा बनाये गये नियम–अधिनियम तथा कानून मूल्यपरक ढ़ंग से सामाजिक गतिशीलता के साथ सहगामी होकर समसामयिक कसौटियों पर खरे उतरे।

जन–प्रतिनिधियों की पात्रता शर्तों में उनकी शैक्षिक योग्यता का कोई स्थान नहीं है, अर्थात् शिक्षा–शून्य व्यक्ति भी लोकतंत्र के उच्चतम पायदान के लिए निर्वाचित हो सकता है। इस विडम्बना की अनेक विद्वानों द्वारा आलोचना की जाती है। प्रसिद्ध राजनैतिक शिक्षा शास्त्री डॉ0 विश्वनाथ प्रसाद वर्मा ने शैक्षिक

योग्यता पर बल देने हुए कहा है ''मैं भारतीय निर्वाचकों की शिक्षा के सन्दर्भ में कट्टर दृष्टिकोण नहीं अपनाना चाहता, फिर भी मेरा विचार है कि निर्वाचक के लिए भारतीय इतिहास की जानकारी आवश्यक है। उदाहरण के लिए हर निर्वाचक को जानना चाहिए कि पाकिस्तान का जन्म किस प्रकार हुआ। नागरिकशास्त्र, भारतीय संविधान तथा भारतीय लोक प्रशासन की जानकारी दूसरा महत्वपूर्ण विषय है (वर्मा, 1971, पृ0सं0,674)।'' इस क्रम को आगे बढ़ाते हुए उन्होंने मुद्रास्फीति, खाद्य स्थिति तथा विदेश नीति व पड़ोसी देशों से सम्बन्ध के ज्ञान पर भी बल दिया है। अन्तर्राष्ट्रीय सैन्य सम्बन्ध जैसे कि अमेरिका व पाकिस्तान के सैन्य सम्बन्ध चीन व अन्य साम्यवादी देशों की निकटता व सैन्य तैयारी, इन सबका ज्ञान भी एक महत्वपूर्ण पहलू है।

अध्ययन की आवश्यकता :

पंचायत स्तरीय जनप्रतिनिधि ग्रामीण विकास को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते हैं। ग्रामीण विकास के विभिन्न कार्यक्रमों जिनमें शिक्षा भी सम्मिलित है, का क्रियान्वयन व नियमन इन जनप्रतिनिधियों के द्वारा ही किया जाता है। इस हेतु यह आवश्यक है कि योग्य व कुशल जनप्रतिनिधियों का चुनाव किया जाय, जिसमें शैक्षिक योग्यता एक महत्वपूर्ण बिंदु है। इस अध्ययन क्षेत्र में व्याप्त रिक्ति के कारण ही इस समस्या का चयन किया गया है।

समग्र :

समग्र के रूप में आजमगढ़ मण्डल के बलिया जनपद के पंचायत स्तरीय समस्त जनप्रतिनिधियों (ग्राम प्रधान, क्षेत्र पंचायत सदस्य व प्रमुख, जिला पंचायत सदस्य व अध्यक्ष) को अध्ययन में सम्मिलित किया गया है, जो वर्तमान (2015–2020 तक) में जनप्रतिनिधि के रूप में कार्यरत हैं।

न्यायदर्श व न्यायदर्श चयन की प्रविधि :

प्रस्तुत अध्ययन हेतु परिभाषित सम्पूर्ण जनसंख्या का चयन उद्देश्यपूर्ण प्रतिचयन विधि द्वारा किया गया
है।

ग्राम पंचायत	क्षेत्र पंचायत	जिला पंचायत	कुल
956	1491	133	2580

शोध से प्राप्त परिणाम :

इस अध्ययन के निर्धारित उद्देश्य से सम्बन्धित आंकड़ों के विश्लेषणोंपरांत परिणाम को निम्नलिखित रूप में व्यक्त किया गया है।

जनप्रतिनिधियों का शैक्षिक स्तर(प्रतिशत में)

जनप्रतिनिधि	परास्नातक	स्नातक	इंटरमीडिएट	हाईस्कूल	जूनियर हाईस्कूल	प्राथमिक	निरक्षर
ग्राम पंचायत	4.184	14.958	18.828	15.794	7.740	34.205	4.288
क्षेत्र पंचायत	1.810	9.657	14.688	12.541	11.602	31.388	18.309
जिला पंचायत	24.060	29.323	17.293	8.270	6.766	12.030	2.255
कुल	3.837	12.356	16.356	13.527	9.922	31.434	12.286

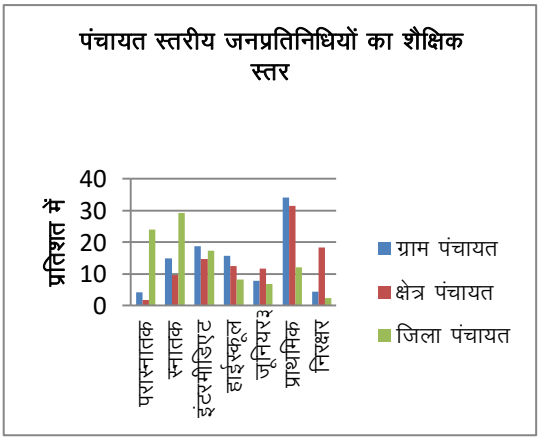

प्रस्तुत आंकड़ों का प्रतिशतवार विश्लेषण करने पर यह पाया गया कि केवल 4.184%ग्राम प्रधान ही ऐसे हैं, जिन्होंने परास्नातक तथा 14. 958% ने स्नातक स्तर तक शिक्षा प्राप्त की है। 18.828%ग्राम प्रधानों ने इंटर, 15.794% ने हाईस्कूल, 7.740% ने जूनियर हाईस्कूल, 34. 205% ने प्राथमिक स्तर तक शिक्षा प्राप्त कीजबकि 4.288% ग्राम प्रधान निरक्षर पाये गये।

प्रस्तुत आंकड़ों का प्रतिशतवार विश्लेषण करने पर यह पाया गया कि क्षेत्र पंचायत स्तरीय जनप्रतिनिधियों में से केवल 1.810%प्रतिनिधि ही ऐसे हैं, जिन्होंने परास्नातक तथा 9.657% ने स्नातक स्तर तक शिक्षा प्राप्त की है। 14. 688%जनप्रतिनिधियों ने इंटर, 12.541% ने हाईस्कूल, 11.602% ने जूनियर हाईस्कूल, 31. 388% ने प्राथमिक स्तर तक शिक्षा प्राप्त की है, जबकि 18.309%जनप्रतिनिधि निरक्षर पाये गये।

प्रस्तुत आंकड़ों का प्रतिशतवार विश्लेषण करने पर यह पाया गया कि जिला पंचायत स्तरीय जनप्रतिनिधियों में से 24.060%प्रतिनिधि ऐसे हैं, जिन्होंने परास्नातक तथा 29.323% ने स्नातक स्तर तक शिक्षा प्राप्त की है। 17.293% जनप्रतिनिधियों ने इंटर, 8.270% ने हाईस्कूल, 6. 766% ने जूनियर हाईस्कूल, 12.030% ने प्राथमिक स्तर तक शिक्षा प्राप्त की है, जबकि 2. 255% जनप्रतिनिधि ही निरक्षर पाये गये।

यदि प्राप्त आंकड़ों के कुल योग को हमतीन भागों में बांटे तो पायेंगे कि केवल 16. 193% जनप्रतिनिधियों ने ही उच्च स्तर (स्नातक एवं परास्नातक) की शिक्षा प्राप्त की है। 71.239% जनप्रतिनिधियों ने विद्यालयी शिक्षा (प्राथमिक से इंटरमीडिएट तक)प्राप्त की। जबकि 12.286% जनप्रतिनिधि निरक्षर पाये गये।

निष्कर्ष :

विभिन्न प्रकार के सेवा क्षेत्रों में योग्यतम व्यक्तियों के चयन हेतु न्यूनतम व अधिकतम शैक्षिक योग्यताएं निर्धारित की गयी हैं परन्तु जनप्रतिनिधियों के चयन हेतु शैक्षिक अर्हता का कोई स्थान नहीं है। यह आवश्यक हो गया है कि लंबी अवधि से चली आ रही इस व्यवस्था पर पुनः विचार किया जाय। शिक्षा के द्वारा सजग व प्रतिबद्ध मनुष्य का निर्माण होता है अतः आवश्यक है कि राजनीतिक क्षेत्र में ऐसे लोगों का प्रवेश हो।प्रायः यह देखा जाता है कि उच्च शिक्षा प्राप्त लोग नौकरी या अन्य पेशे का चयन करते हैं और राजनीति से विमुख हो जाते हैं। यही कारण है कि वर्तमान समय में संवेदनशील व कर्तव्यनिष्ठ जनप्रतिनिधियों का सर्वथा अभाव है तथा राजनीति अपराधिक छवि वाले, अशिक्षित व मौकापरस्त लोगों का गढ़ बन गया है, जो देश व जनता के हितों को ताक पर रख अपना हित साधने में लगे हैं। जनप्रतिनिधियों हेतु न तो कोई शैक्षिक अर्हता है और न हीं उनके सेवा निवृत्ति की कोई आयु निर्धारित की गयी है। कितने ही जनप्रतिनिधि निरक्षर हैं या केवल प्राथमिक शिक्षा प्राप्त हैं। शिक्षा को विकास व समाज कल्याण का आधार माना गया है इसलिए जनप्रतिनिधियों के लिए इसे अनिवार्य योग्यता के रूप में स्वीकार किए जाने पर विचार किया जाना चाहिए। यदि जनप्रतिनिधि ही शिक्षित नहीं होंगे तो समाज के विकास में उनकी भूमिका महत्वहीन हो जाएगी।

सन्दर्भ :

1. जोशी, डा0 आर0पी0 एवं मंगलानी, डॉ0 रूपा, (2010), *भारत में पंचायती राज,* जयपुर : राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी।
2. महिपाल, (2004), *पंचायती राज : चुनौतियाँ एवं संभावनाएं,* नई दिल्ली : ग्रंथ शिल्पी।
3. वर्मा, आचार्य डा0 विश्वनाथ प्रसाद, (1971), *आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिन्तन,* आगरा : लक्ष्मी नारायण अग्रवाल।
4. http://sec.up.nic.in/ElecLive/WinnerList.aspx .